सोया नहीं कबीर

—

डॉ. अख़्तर नज़्मी



रामकृष्ण प्रकाशन

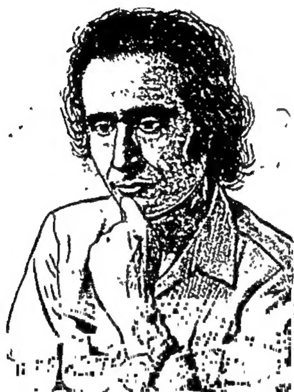
सोया नहीं कबीर

डॉ. अख़्तर नज़्मी

सर्वाधिकार : प्रकाशकाधीन
प्रथम संस्करण : 1998
मूल्य 75/-
परामर्श मदनमोहन उपाध्याय
(आई.ए.एस)
चयन : फीरोज़ मुमताज,
धनीराम 'बादल',
अनवारे इस्लाम
सम्पादन अनवारे इस्लाम
आवरण एवं रूपांकन : गिरधर उपाध्याय
डी.टी.पी. कम्पोजिंग : सिल्वर स्कैन कम्प्यूटर सर्विसेज
तिलक चौक, विदिशा (म.प्र.)
मुद्रक एवं प्रकाशक : रामकृष्ण प्रकाशन
सावित्री सदन, तिलक चौक
विदिशा (म.प्र.) 464 001
दूरभाष : 32675

SOYA NAHIN KABEER
Couplets of Dr. AKHTAR NAZMI
Edited by : ANWARE ISLAM
ISBN-81-7365-033-0 Rs 75/-

जीवन संगिनी
निशात अख़्तर
के लिए



Dr AKHTAR 'NAZMI'

जैसी होनी थी हुई, चहरे की तकदीर।
हमको तो अच्छी लगी, अपनी ये तस्वीर।।

–अख़्तर नज़्मी

सम्पादकीय

कविता दरअस्ल एक मुसलसल तलाश
अस्मिता की। एक अदीब या साहित्यकार '.
व्यक्त करने के लिये कितनी ही विधाओ की
उम्र तलाश मे गुजर जाती है और ऐसी कोई
आता जो संदृष्टि दे सके, अपने आप को

शायद समग्रतः व्यक्त करने का प्रश्न
अधिकतम सतुष्टि के निकट जाने की चाह
यह गैरवाजिब भी नहीं है।

डॉ अख्तर नज्मी अभी तक गज़लो
मुकाम जहाँ खडे होकर वे अपने आपको व्यक्त
सारे निजी और पारिवारिक दुख–दर्दों को

डॉ नज्मी हमारे समय के महत्वपूर्ण
में उनकी पुस्तकें आ चुकी हैं। वे अदबी महफि
इन चीजो ने उन्हें प्रसिद्धि भी दी है, मान और
संतुष्टि नहीं मिली, अपनी सहज अभिव्यक्ति
ने हजार से ऊपर दोहे कहे हैं। उनके दोहों
शायद उनकी विधागत तलाश पूरी हो गई है
और पडाव की ज़रूरत नहीं पडेगी।

'सोया नहीं कबीर' आपके हाथो में है।
दोहों को जो कुछ कहना है, वे खुद कहेंगे।
कायम हो, यह आशा ज़रूर करता हूँ।

●

भूमिका

हमारे साहित्यिक समाज मे सहिष्णुता का अभूतपूर्व संकट उपस्थित है। कविता और कविता की भाषा पर बात करना दुश्वार ही नहीं जोखिम भरा काम हो गया है। जोखिम की मात्रा तब और बढ़ जाती है जब बात, हिन्दी–ऊर्दू के मुताल्लिक हो रही हो। ये भाषा का धर्म तो नहीं अलबत्ता राष्ट्रीयता ज़रूर होती है। इससे भाषा की ग्राहयता और गुणग्राहकता बढती है, उसका व्यापक राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चरित्र बनता है।

सैद्धांतिक और दार्शनिक आधार पर ये बाते सही भी हों और तार्किक भी, परन्तु जिस दौर मे हम जी रहे हैं उस दौर में भाषा की जात भी पहचानी जा रही है और सांप्रदायिकता भी। इसके चलते अमीर खुसरो, कबीर, मलिक मोहम्मद जायसी, उसमान, इशा कासिम शाह, नूर मोहम्मद, फ़ाजिल शाह, तथा अब्दुल रहीम खानखाना और रसखान जैसे मुसलमानों की 'हिन्दी' हिन्दुओ की भाषा करार दी जाने लगी है और पण्डित बृजनारायण 'चकबस्त', नसीम, बिस्मिल इलाहाबादी, रघुपति सहाय 'फिराक़', आनन्द नारायण मुल्ला और प्रोफेसर जगन्नाथ आज़ाद जैसे हिन्दुओं की उर्दू, मुसलमानी भाषा। इस अफ़सोसनाक मंजर में यह कहने का अर्थ ही क्या रह गया है कि हिन्दी और उर्दू दोनों सहोदराएँ हैं। उपलब्ध प्रमाणों से तो खड़ी बोली (हिन्दी) के नियामक अमीर खुसरो (1255 ई.–1324 ई) ही ठहरते हैं। 'हिन्दी' उन्हीं की दी हुई संज्ञा है। हिन्दवी का प्रयोग भी उन्होने ही पहले–पहल किया ·

> मुश्क काफूरस कस्तूरी कपूर
> हिन्दीवी आँनन्द शाकी ओ सरूर
>
> शर्मो हया पर हिन्दी लाज
> हासिल करिये बाज खिराज

अरबी, तुर्की, हिन्दी, उर्दू के विद्वान और संस्कृत के अच्छे खासे जानकार सूफी संत अमीर खुसरो ने कुल जमा 99 किताबें लिखी हैं। इनमें 'खालिके बारी' नाम का शब्द कोश भी शामिल किया जाता है जिसमें अरबी, फारसी तुर्की शब्दो के पर्यायवाची हिन्दी (भारतीय) शब्द दिये गए हैं। इसे पहला हिन्दी–उर्दू कोश कहा जाता है उन्होंने भाषाओं के बीच पुल भी बनाये। नये सलीके से फारसी शब्दो को भारतीय मुहावरों में पिरोया ·

जे हाले मिसकीं मकुन तगाफुल दुराये नैना बनाये बतियाँ।
किताबें हिजराँ नदारम ऐ जाँ, न लेहू काहे लगाये छतियाँ।।

कबीर (जन्म सं. 1455) और जायसी (जन्म सं. 1540) ने तो इस पुल पर से साहित्य की सारी कायनात को गुज़ार दिया। नजीर अकबराबादी तक जो रास्ता जाता है, इसी पुल पर से गुज़र कर आता है।

अमीर खुसरो को यों तो उर्दू का भी जनक कहा जा सकता है, परन्तु अदब वाले ये श्रेय वली (शाह वकी उल्ला, औरंगाबाद, 1668–1744 ई) को देते हैं। उर्दू को अदब के दरबार में स्थान दिलाने और जनता में लोकप्रिय बनाने का काम तो वास्तव मे वली ने किया ही है। बकौल राम नरेश त्रिपाठी अंग्रेजी में जो स्थान चासर का और हिन्दी में खुसरो का है, वही उर्दू मे वली का है (कविता कौमुदी– उर्दू पृ 128) अमीर खुसरो और वली मे एक बात समान थी– वह उनका व्यापक पर्यटन दोनों ही सूफी फकीर थे और दोनों मं ही धार्मिक सहिष्णुता थी। दोनो मजहबी कट्टरपन के मुखालिफ थे। इसलिए ही शायद हिन्दी और उर्दू का सारा महत्वपूर्ण साहित्य, कविता– शायरी, धर्म निरपेक्ष है, सहिष्णुता का पक्षधर है। आरंभिक हिन्दी और उर्दू दोनों पर ब्रजभाषा की छाप है।

दिल छोड करके यार क्यों कि जावे ?
ज़ख्मी हो शिकार क्यों कि जावे ?
जब तक न मिले शराबे दीदार
आँखो का खुमार क्यो कि जावे ?

गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डारे केस
चल खुसरू घर आपने, रैन भयी चहुँ देस

भाषायी सामासिकता के सबंधो का निर्वाह कबीर ने किया और इसके बाद तो यह हमारी परंपरा बन गयी। हिन्दी–उर्दू दोनो ज़ुबानें हिन्दुस्तान का मुक्कदर हो गयीं। उर्दू का फ़ारसी के छन्दों, मुहावरो लबो–लहजों से श्रृंगार

हुआ। भारतीय बोलियों वाली कहन की धानी चूनर उसने ओढ़ी। उधर हिन्दी ने भी संस्कृत की शब्द सम्पदा से खुद को सजाया-सवारा। कितने ही खित्तों की माँ-बोलियों ने उसे अपने पैराहन दिये। अतियाँ भी दोनों तरफ ख़ूब हुई और सिंगार भी दोनों का ख़ूब सजा। जंगे आज़ादी के अंतिम चरण में विषाक्त दिमागों ने भाषाओं में, जंग शुरू करवा दी। आज जो भाषायी सांप्रदायिकता नजर आ रही है, वह इसी दौर में पैदा की गयी। निश्चित ही यह प्रयोगशाला में तैयार किया हुआ वायरस है, हिन्दी उर्दू भाषाओं का स्वभाव नहीं।

आज जो लोग इन दो भाषाओं को दो छोरों पर खड़ा करके देख रहे हैं वे समझ नहीं पा रहे हैं कि इन किनारों के बीच एक धारा है– सतत प्रवाहमान जो दोनों किनारों को जोड़े रखती है, दोनों ही को समान रूप से भिगोये रखती है।

'दोहे' हमारे भारतीय साहित्य की, अमूल्य निधियाँ हैं। कबीर, तुलसी, रहीम, बिहारी, रसखान ऐसे कितने ही नाम हैं जिन्होंने इस छन्द को अपने भाव दिये, अपनी भाषा दी। दोहा हिन्दू है या मुसलमान है इसका फ़ैसला कैसे होगा। कौन करेगा ? दोहा की जात तो दो लाइनों की सीमा है, दोहे का धर्म तो गागर मे सागर भरना है और दोहे का व्याकरण तो 13,11 मात्राओं का वज्न है।

यह समय दोहों के पुनर्जन्म का काल कहा जा सकता है। ग़ज़ल ने अपने स्वभाव, मिजाज विषयवस्तु में क्रांतिकारी बदलाव किये। माशूक की ज़ुल्फों से निकल कर वह इकलाब के परचम तक आयी। अतिव्याप्ति और व्यापकता के कारण उर्दू अदब पर-तो ग़जल इतनी बुरी तरह छायी कि और फार्मों को उसने गौण कर दिया। ग़ज़ल के नैन-नक़्श संवारने और उसे संवेदनशील और विचारशील बनाने मे जितनी मेहनत उर्दू के कवियो ने की है, उतनी मेहनत किसी और भाषा में किसी और छन्द के लिए हुई हो, मेरी जानकारी में नहीं है।

लोकप्रियता के भी अपने खतरे होते हैं– गज़ल संगीत में भी गयी। लोक से शास्त्रीय रागों तक के सुरों में वह ढली। फकीरों की रहगुज़र से तवायफ़ों के कोठो तक गायी गयी। पर वह रही हमेशा जनता की, हर वर्ग ने उसे चाहा, सराहा। हमारे वक्त तक आते-आते ग़ज़ल गायिकी में एक उच्चस्तरीय व्यावसायिकता का समावेश हो गया। मेंहदी हसन, गुलामअली, राजेन्द्र-नीना, जगजीत, तलत अज़ीज़, पीनाज मसानी से लेकर पता नहीं कौन-कौन ग़ज़ल गायक पैदा हो गये। इन्होंने नव-कुबेरो के मनोरंजन का साधन बनाकर पेशा

किया गजल को। यह मौसीकी दरअसल ग़ज़ल के सामर्थ्य को सीमित करने की कोशिश थी। हालाकि रचना और रचनाकार का इसमें दोष नहीं था परन्तु तरल ऐन्द्रीयता को टॅक्नॉलॉजी विस्फोट का सहारा मिल गया और गज़ल को मौसीकी, फिर उन्हीं बेहोश गलियो में ले गयी जहाँ से शायरों ने बहुत मेहनत करके उसे निकाला था।

दोहे का पुनर्जन्म इसी मौसीक़ी से हुआ है– यह ठीक–ठीक तो नहीं कहा जा सकता, पर इतना जरूर कहा जा सकता है कि ग़ज़ल कहने वाले पाकिस्तानी शाइरों ने विस्फोटक क्षमता के साथ दोहे का अचानक पुनराविष्कार किया है। भारत में तो इसके लिए अनुकूल ज़मीन भी है। यहाँ हिन्दी–उर्दू दोनों प्रकार के कवियों ने इसे फिर अपनाया, स्वीकार किया। इधर जो कुछ लोग दोहो के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण माने गये हैं उनमें डॉ. अख्तर नज्मी का नाम भी प्रमुख है। अख़तर नज्मी उर्दू के लोकप्रिय शाइर हैं। भारतीय उपमहाद्वीप के शीर्ष स्थानी मुशाइरों मे वे न केवल शिरकत कर चुके हैं, बल्कि प्रशंसा भी अर्जित कर चुके हैं। इस बीच वे तेजी से नज़्मों, गज़लों और दोहों की ओर आकृष्ट हुए हैं :

अपने ही जज्बात है, अपने एहसासात।
अपनी भाषा में कही अपने दिल की बात।।

यहाँ उन्हें यदि अपने भाव, भाषा और दिल के साथ खुद को व्यक्त करने का अवसर मिल रहा है, तो यह उनकी भारतीयता और अपनी सांस्कृतिक परंपरा से अटूट रूप से जुडे रहने का ही परिणाम है। देश भक्ति संबंधी दोहे उन्होंने इस तरह लिखे हैं–

जल भी उसके हाथ का, मत करना स्वीकार।
देश भक्ति के वेश मे, फिरता है गद्‌दार।।

मिलने को अवसर मिले, मुझे बहुत रंगीन।
मुझसे मेरे देश की, छूटी नहीं जमीन।।

तट पर हम प्यासे खडे, नदिया भी मजबूर।
हम दिल्ली के पास हैं, दिल्ली हमसे दूर।।

वैसे तो हर देश है, कर्जे का मोहताज।
अपना देश ऐसा नहीं, गिरवी रखदे ताज।।

उनमें देश का दर्द, हालात की तस्वीर और तंज, सब एक साथ आ गये

हैं। यह दौर सांप्रदायिक दृष्टि से भयावहताओं और भयानक खबरों का दौर रहा है।

डॉ. नज़्मी ने पूरे कन्सर्न के साथ इस भयावहता को अनुभव किया है। वे आहत हैं पर कातर और निराश नहीं :

मिल जुल कर तू भी मना, सबके संग त्यौहार।
पागल, अपने आप से, लड़ना है बेकार।।

अधा बहरा हो गया, 'नज़्मी' एक मकान।
दरवाज़े में आँख थी, दीवारों में कान।।

साजिश ने तरकीब से, बिछा दिये हैं कांच।
तू इन पर ऐं नर्तकी, नाच सके तो नाच।।

पाठ अहिंसा का पढ़े, रखे न कोई याद।
मंदिर मसजिद बन गये, दंगों की बुनियाद।।

दंगे में इस बार तो, मारा गया यकीन।
खुशकिस्मत थे मिल गयी, दो गज जिन्हें ज़मीन।।

दीन धर्म के नाम पर, बही रक्त की धार।
आपस में टकरा गये, जब जब तुच्छ विचार।।

नादानी के खेल का, कोई नहीं निदान।
जलते रथ पर बैठ कर, कहाँ चल श्रीमान।।

दंगे का नाटक करो, चीखो शोर मचाव।
नेताजी कब से खड़े, करने बीच–बचाव।।

इन दोहों में कवि कहीं भी 'लाउड' नहीं है। उसके पास करुणा का खजाना है, नफ़रत के शोले नहीं। एक तरह का सूफ़ियाना अंदाज हैं। विषय नये हैं, समस्याएँ नयी हैं पर भाव और ट्रीटमेण्ट वही हैं। दिसम्बर 6. 1992 के हालात में अल्पसंख्यको को किस संशय में रहना पड़ा, उनकी तकलीफ़ों का स्तर क्या था, इसकी हल्की झांझ भर है। इन दोहों में, जो कमोवेश दोहाकार के समाजी दायित्वों की ओर ही हमारा ध्यान आकृष्ट कराता है। सामाजिक सरोकार उनके दोहों में अलग ढग से आता है। यहाँ पर्यावरण की चिन्ता है :

नदिया मैली हो गयी, धोये सबके पाप।
लज्जित फिर ऐसी हुई, उड गई बनके भाप।।

गहराई थी साठ गज, घेरा था दो मील।
मौसम उसको पी गया, सूख गयी वो झील।।

इसी तरह गरीबी और मुफलिसी पर उनकी चिंताएँ जो शक्ल अख़्तियार करती हैं, ये दूसरों से कुछ अलग तरह की हैं–

कासा जिसके हाथ मे, दर–दर माँगे खाय।
जिसके बाजू कट गये, हाथ कहाँ फैलाय।।

आदत से मजबूर हैं, आदत बडी अजीब।
जिस दिन खाया पेटभर, सोया नहीं गरीब।।

ऐरे–गैरे खा गये, उनका सारा माल।
भूखा होगा आज भी, उसका अपना लाल।।

बीड़ी भी आधी पिये, आधी रखे बुझाय।
गरम खून को बेच कर, ठण्डी रोटी खाय।।

जन्म कुण्डली रोज़ ही, देखे और दिखाय।
जीवन उसका शुभ घडी, खोजे खोज न पाय।।

कवि का भोगना आम आदमी के भोगने से भिन्न होता है। कवि वह भी भोगता है जो उसने भोगा नहीं होता। कवि का दिल तो दक्षिण अफ्रीका में गोरो द्वारा किये जा रहे अत्याचारों पर, विएतनाम पर गिर रहे नापाक बमो पर, ईराक पर होती कार्पेट बाम्बिग पर, वैसे ही धडकता, विचलित होता है, जैसे ये उसे खुद झेलने पड रहे हों। कवि की आँख पराये आँसुओं के लिए होती है। वे अशआर में, छन्दों मे, दोहो मे याकि नस्त्र मे भी अभिव्यक्त होते हैं पर उसके अपने आँसू बनकर। अपने भोगे या कि अनुभव किये दुख–दर्द को डॉ नज्मी ने बडी बेतकल्लुफी से दोहो को सौंप दिया है। ये बेतकल्लुफी दोहो की ताकत बनी है।

डॉ नज़्मी के दोहो में उर्दू शायरी का शाहाना रंग भी है। उसका ज़िक्र किये वगैर बात अधूरी रहेगी, मसलन–

जब खनका उसका बदन, उभरा एक खयाल।
बजारन की चाल मे, कितने हैं सुर ताल।।

नज़्मी की ये लालसा, ऐसा दिन भी आय।
बासंती का रूप भी, बासंती हो जाय।।

जनम–जनम प्यासी रहे, जल सब तक पहुँचाय।
नज़्मी ऐसा दान तो, नदिया ही कर पाय।।

कड़ी धूप को चांदनी, कहकर वो मुस्काय।
राम करे इस बात को, कोई समझ न पाय।।

इन दोहों में उर्दू का मिज़ाज है, लेकिन अंदाज़ ज़ालिम– कातिल बेवफ़ा वाला नहीं है। इसलिए ये दोहे बहुत अंदर जाकर बहुत धीरे–धीरे घुलते हैं।

डॉ. नज़्मी घोषित या अघोषित रूप से प्रतिबद्ध शाइर या कवि नहीं हैं। उनका विचारधारात्मक आग्रह भी नहीं है इस कारण वे मुक्ताकाशी कवि अवश्य लगते हैं। किन्तु इसी कारण उनकी सीमाएँ भी बन जाती हैं। शाइर का सरोकार तो मनोगत और वस्तुगत यथार्थ, दोनों से ही होता है। अपने द्वंद् को, बुनियादी संघर्ष को वह शाइरी या कविता का लिबास पहना देता है। इस मामले में डॉ. नज़्मी डेमोक्रेट और उदार कवि ठहरते हैं। मार्क्सवादी चिंतक बी टी रणदिवे ने कहीं कहा था कि जब अभिव्यक्ति के रास्ते तंग होते हैं तो प्रेम भी एक मूल्य की तरह विस्फोटक क्षमता के साथ प्रकट होता है।

मैं न डॉ नज़्मी को दोहा–सम्राट ठहराने जा रहा हूँ, और न यह कहने कि उन्हें पढ़े बिना अदब की पहचान मुश्किल है। लेकिन यह ज़रूर कहना चाहता हूँ कि एक पारदर्शी कवि को उसकी खूबियों, ख़ामियों और सीमाओं के साथ संपूर्णता में देखना चाहिए। डॉ नज़्मी इस लिहाज़ से सहज, संप्रेष्य, दो–टूक कवि हैं। उन्हे पढना एक अनुभव से गुज़रना है।

1 मई 1994 रामप्रकाश त्रिपाठी
सचिव, जनवादी लेखक संघ, (म.प्र)
94/52 तुलसी नगर,
भोपाल

स्वगत

शोध कार्य करने चला, किया स्वय पर शोध।
जीवन परिचय में हुआ, निराकार का बोध।।

'सोया नहीं कबीर' के लिए मुझे जीवन परिचय लिखना है। जीवन के उस सफर की कहानी लिखनी है जो 29 नवम्बर 1931 से शुरू हुआ और जारी है, जिन्दगी के ऊचे–नीचे आडे–तिरछे रास्तों पर।

मैंने जिस घराने में आँख खोली, वो पीरों फ़कीरों और दरवेशों का घराना यानि क़ादरी घराना है। जब मैंने होश संभाला तो मुझे अपने आसपास ऐसा कोई माहौल नजर नहीं आया जिसे सूफी सन्तों का माहौल कहा जा सकता हो। मेरे पुरखों ने दरवेशी और फकीरी की वो आनबान और शान जिसके आगे बादशाही भी सर झुकाए खडी रहती थी, जाने कहाँ और कब गुम कर दी।

मुझे मिला एक मध्यम वर्गीय, साधारण परिवार उसी मे पला बढा। मेरे बचपन को सुख–सुविधाएं बहुत मिलीं लेकिन वो तवज्जोह पूरी तरह न मिल पाई जो चरित्र निर्माण के लिये बहुत जरुरी होती है। इस अभाव के बावजूद मेरे चरित्र का निर्माण हुआ और इत्तफाकन सही दिशाओं और सही मार्गों पर हुआ। इस बात पर मुझे स्वयं सुखद आश्चर्य है। मेरी होशमंदी और हुनरमंदी यह रही है कि मैंने जिन्दगी की बेशुमार बे–उसूलियों को अपनाया लेकिन अपने उसूलों का दायरा टूटने नहीं दिया। मुझ मे हर वो ऐब है, जो एक आम आदमी में होता है, या हो सकता है लेकिन व्यक्तित्व में ऐसा कोई दोष नहीं है जिस पर मेरी आत्मा, मेरा ज़मीर मुझे शर्मिन्दा कर सके।

मेरा सौभाग्य यह है कि जिन्दगी मुझे जब कुछ देना चाहती है अचानक दे देती है, बिना मांगे, बिना हाथ फैलाए। इन्हीं कीमती चीजों मे से सब से ज़्यादा कीमती चीज "शायरी" है।

बचपन मे शायरी से लगाव जरूर था लेकिन यह नहीं सोचा था कि कभी

मैं भी शाइर बन सकता हूँ। मैं संगीत का दीवाना था– सीखना चाहा, नहीं सीख सका। इसलिये यह दीवानगी रफ़्ता–रफ़्ता दिलचस्पी में बदल गई। शायरी से दिलचस्पी थी, इस दिलचस्पी ने दीवानगी का रूप धारण कर लिया। जब शायरी ने पूरी शिद्दत से मुझे खुद–ब–खुद अपनाया तो उसे हमेशा–हमेशा अपनाए रखने के लिये मैंने उसकी तमाम शर्तें मान लीं। शायरी के फ़न की बारीकियों को समझने–परखने और बरतने के लिये गहन अध्ययन किया। पुराने और नये मिज़ाज की शायरी के अलंकारों और छन्दों के तेवरों को पढ़ने और समझने की निरतंर और मुसल्सल कोशिशों के हवाले खुद को कर दिया।

शायरी के ताने–बाने मेरे जहन में उस आंशिक रूप में मिली विरासत ने बुने जो मेरे स्वर्गीय पिता श्री मुमताज़ उद्दीन 'बेखुद' से होती हुई मुझ तक पहुँची थी। शायरी में उस्ताद की तलाश की लेकिन कोई मिला नहीं।

> अपनी ही रौशनी में सफ़र कर रहा हूँ मैं।
> जो राह के चिराग़ थे, सब बुझ–बुझा गये।।

शायरी के नक़्शे, ख़ाके मेरे ख़्यालों में उभारे, मेरे माहौल के हल्के, गहरे, मोहब्बतों के, नफ़रतों के, यकीन और बेयकीनी के सायों के इन नक़्शों और ख़ाकों से कुछ रेखायें उभरी ओर मेरी चिन्तन रेखा से अपना रिश्ता जोड़ लिया।

फ़िक्र आसान लफ़्ज़ों का सहारा लेकर शे'रों में ढलने लगी। कुछ शे'र हुए जिनमें मेरे नौजवान जज़्बों का संगीत और मेरी आरज़ुओं की नग़मगी की हल्की नर्म–ओ–नाज़ुक लहरें बसी हुई हैं।

> पास है तूँ, ग़ज़ल हो गई।
> तेरी खुश्बू, ग़ज़ल हो गई।।

> तेरी कशमकश का मुआमला तेरी ऐहतियात से खुल गया।
> जो उठी और उठ के झिझक गई, वो निगाह दिल में उतर गई।।

1950 से शायरी की बाक़ायदा शुरूआत हुई। मैं उस ज़माने में नाग़पुर महाविद्यालय में प्रथम वर्ष का छात्र था। उस वक़्त मेरे पास चन्द शे'र और चन्द ग़ज़लें थीं (अब अप्रैल 1994 में रचनाओं की 12 पाण्डुलिपियां हैं) मेरी शायरी की दाद देने वाले, मेरी रचनाओं को पसंद करने वाले मुझे वग़ैर तलाश किये ही मिलते गये। इन्हीं की हिम्मत अफ़ज़ाई ने इस दिशा में मुझे आगे और आगे बढ़ने का हौसला दिया। उच्चस्तरीय हिन्दी पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशन का सिलसिला जारी हो गया। अंग्रेज़ी, मराठी, और गुजराती भाषाओं में रचनाओं

के अनुवाद हुए। पहले गलियों–गलियों शे'र गाता, गुनगुनाता फिरता था उसके बाद शहरों–शहरों, मुल्कों–मुल्कों मुशायरे पढ़ता फिर रहा हूँ।

मैं बहुत टूटा और बिखरा हूँ। लेकिन इस टूटने और बिखरने के जानलेवा ऐहसास का बोझ जिन्दगी के सफ़र मे उठाए–उठाए नहीं फिरा बल्कि उसे अपनी रचनाओ के सुपुर्द कर दिया– अश्आर के हवाले कर दिया।

तुम को खाली ही मिलेगा मेरे दिल का कासा
ग़म भी मिलते हैं तो अश्आर को दे देता हूँ

घर हर जगह है और कहीं भी नहीं है। जिस खुश्बू ने आवाज़ दी जिस छाँव ने क़रीब बुलाया– चला गया। कुछ देर रुका, बैठा और फिर जो रास्ता मिल गया उसी पर चल पड़ा।

ख़ाना बदोश लोग हैं क्या घर बनाएगे।
साया जहाँ मिलेगा, वहीं बैठ जाएंगे।।

मेरे अन्दर बसी हुई दुनिया और बाहर बिखरी हुई दुनिया, आपस में मिलकर एक डोर में बंध जाती है, हम रिश्ता हो जाती है तो मेरी शायरी को नये दायरे, नये ज़ाविये, नये हाशिये और नये मुहावरे मिलने लगते हैं। समाज की हर क्रिया और प्रतिक्रिया, माहौल का हर अमल और रद्दे–अमल मेरे शायराना ऐहसास और जज्बात को छूता हुआ गुज़रता है। उनमें से मैं जब चाहूँ, ... जिस ऐहसास और जज़्बे को चाहूँ शायरी का लिबास पहना सकता हूँ, शेर के साँचे में ढ़ाल सकता हूँ। यह मेरा करिश्मा नहीं, कुदरत की देन है।

कभी–कभी नहीं, बल्कि अकसर ऐसा होता है कि 'विचार' स्वय मेरी रचनाओं में घर बना लेते हैं। इन छोटे–बड़े, ऊंचे–नीचे घरों ने एक अच्छा खासा 'रचना नगर' बसा लिया है। इन में हर छन्द, हर विधा, हर सिन्फे शायरी का अपना अलग हल्का और दायरा है जो सिर्फ मेरी रचनाओ या मेरे ही लिये नहीं सबका है, सबके लिये है।

मेरी खुशनसीबी यह है कि जो भी शायराना ख्याल मेरे ज़हन में उभरता है वो अपने लिये मुनासिब काव्य रूप (फार्म) लेकर आता है। इन मे गजल के साथ–साथ आज़ाद नज़्म, नसरी नज्म, क़तआ, रुबाई, गीत, हाइकू, तीन पंक्तियों वाली मुख्तसर नज़्म जिसको मैंने ख्याल रेज़े (विचार कण) नाम दिया है और दोहे भी शामिल हैं।

मैं बुनियादी तौर पर ग़ज़ल का शाइर हूँ लेकिन मेरा रचनात्मक चिन्तन,

मेरी शायराना फ़िक्र ने जिस काव्य रूप, जिस सिन्फ़े शायरी अपनाया, मैंने उसे पूरी साहित्यिक ईमानदारी के साथ अपनाने की इजाजत दे दी।

एक रात लेटे–लेटे कबीर का ख़्याल आया तो कबीर के दोहे जो जहन में सोये हुये थे जाग गये, सिर्फ जागे ही नहीं बल्कि पूरे माहौल पर रस वर्षा करने लगे। ज़हन की फिज़ाओं में खूबसूरत रगीन रोशनियां बिखरने लगे। ग़ज़ल में एक शे'र ये भी कहा था।

रटते रहे तो, याद न कोई सबक हुआ।
सुन–सुन के याद हो गये दोहे कबीर के।।

इस शेर की तासीर ने कबीर से क़रीब और क़रीब कर दिया। इस क़ुरबत और नज़दीकी ने तकरीबन 41 साल की कड़ी साहित्य साधना और सख़्त शायराना मश्क और रियाज़ ने 5 मार्च 91 को पहला दोहा मुझे दिया

दोहे बरसे देर तक, जैसे बरसें तीर।
मैं भी जागा रात भर, सोया नहीं कबीर।।

यह दोहा कह लेने के बाद मुझे अपने शायराना सरमाये में नये इज़ाफ़े पर हैरत भी हुई और मसर्रत भी। सोचा था एक दोहा इत्तफ़ाकन हो गया, अब और न होंगे, लेकिन उसके बाद हर रोज़ लगातार दोहे होने लगे।

चिन्तन बदली कर रही, दोहों की बौछार।
कठिन विधा ने कर लिया, सहज मुझे स्वीकार।।

जब निरन्तर दोहो की वर्षा होने लगी तो इस छन्द का गहन अध्ययन करना, इसकी बारीकियों को समझना और परखना एक साहित्यिक दायित्व बन गया। मेरे दिमाग़ मे कई प्रश्न उभरे। पारम्परिक दोहों की विशेषता और दिशा क्या है ? आज जब यह छन्द कई साल बाद लौटा है तो अपनी 'ज़ुबान' 'मिजाज' और तेवर में क्या तबदीली लेकर लौटा है।

दोहा-छन्द के अध्ययन और इसके आकार–प्रकार पर चिन्तन करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि दोहे में निर्धारित मात्राओं 13–11 का निर्वाह करना पहली और बुनियादी शर्त है। ज़ुबान आम बोलचाल की लेकिन मंजी हुई हो। लहजा आकर्षक, नुकीला और धारदार हो– दोहों मे जो बात कही जाये वो दिलों में सीधी उतर कर हलचल मचा देने वाली और चौंका देने वाली हो।

उर्दू में सबसे मुश्किल छन्द रुबाई है। रुबाई में रुबाई के लिये निर्धारित की गई विशेष मात्राओं का निर्वाह जरुरी है। खास अरकान (मात्राओ) के अलावा

उसमें ज़ोर, असर और चौंका देने की ख़ूबी भी ज़रूरी है। रुबाई में चार पंक्तियाँ (मिसरे) होती हैं। पहले दो मिसरों में शायर परिभाषा स्वरूप कोई बात बयान करता है, तीसरे मिसरे में पहले दो मिसरों में कही गई बात को असरदार अन्दाज में समेटकर चौथे मिसरे में इस फ़नकारी से पूरी कर देता है जो चौंकाती भी है और हैरती भी कर देती है। मिसाल में अपनी एक रुबाई

मुखलिस मुझे उस जैसा न मिल पायेगा।
हम दर्द है मेरा वो कहाँ जायेगा।।
वो देख नहीं सकता मुसीबत में मुझे।
टल जाय मुसीबत तो चला आयेगा।।

दोहे में सिर्फ़ दो पंक्तियाँ 13–11 मात्राओं की होती हैं। पहली पंक्ति मे दोहाकार धनुष पर बाण रख धनुष खींच लेता है और दूसरी पंक्ति में बाण छोड़ देता है। दोहे की कामयाबी का दारोमदार बाण के भरपूर अंदाज़ में निशाने पर लग जाने पर है। इस मिसाल में भी अपना ही एक दोहा पेश करने का साहस कर रहा हूँ।

जो सब का ही यार हो, नहीं किसी का यार।
हर चाबी से जो खुले, वो ताला बेकार।।

अगर विभिन्न छन्दों को शतरंज के मोहरों से मिसाल दें तो शतरंज की बिसात पर दोहे की 'चाल' को 'घोड़े' की चाल कह सकते हैं। क्योंकि यही एक ऐसा मोहरा है जो दूसरे मोहरों के सरों पर से गुजर कर मार करता है, न सिर्फ अपने ख़ाने में पहुँच जाता है बल्कि और कई ख़ाने घेर लेता है।

दोहे की इस विशेषता, इस खुसूसियत ने मुझे अपना शैदाई बाना लिया है।

इधर चार–पाँच बरसो में हिन्दी और उर्दू के शायरों ने दोहे कहने शुरू किये हैं। यह खुशी की बात है कि इनकी तादाद में इज़ाफ़ा होता जा रहा है। दोहे की नये अंदाज में वापसी ने हमारे साहित्य के गौरव को बढ़ाया है, हमारी अदबी महफिल को नये गुलदस्तों से सजाया और महकाया है। जहाँ तक मेरे अपने दोहों की बात है मैं इसे शायरी की शाहराह पर अपना नया कदम समझता हूँ। वो बातें या वो तजुर्बे जो मैं उर्दू के प्रचलित छन्दों 'बहरों' में नहीं कह पाता या इनके लिये मुनासिब बहरें और अल्फाज नहीं मिलते, दोहों मे दोहे का विकार कायम रखते हुये कहने की कोशिश कर रहा हूँ।

मेरे दोहे हिन्दी, उर्दू पत्रिकाओं मे निरतर प्रकाशित हो रहे है– श्रोताओ मे पसंद किये जा रहे हैं।

अब तक तकरीबन एक हज़ार दोहे कहे हैं। दोहों की इस लगातार बारिश ने और विधाओं का मुझ तक पहुँचने का रास्ता बन्द नहीं किया है। दोहे होते रहते हैं साथ ही साथ गजलें भी होती रहती हैं। हैरत की बात यह है कि न मेरे दोहों पर ग़ज़लों के अश्आर का साया पड़ा है न ग़ज़लों पर दोहों का रंग चढ़ा है। मेरी शायरी में हर छन्द का रूप–रंग अलग है, माहौल अलग है। यह साथ चलाते हैं मगर कभी आपस में टकराते नहीं। मेरी रचनाओं का स्वभाव भी मेरी ही तरह है, सबके साथ और सब से अलग।

मेरी यह मान्यता है कि किसी भी कलाकार की हर कलाकृति अद्‌भुत और बेमिसाल नहीं होती। फ़नकार के फ़नकारों में से फ़न की कीमती और खूबसूरत नमूने तलाश करना भी एक फ़न है।

खासतौर से एक रचनाकार के लिये अपनी रचनाओं में से चन्द रचनाओं का चयन करना, इन्तख़ाब करना बहुत ही मुश्किल काम है। मैंने यह मुश्किल काम भी खुद ही किया है। अपने सैकड़ों दोहों में से यह दोहे आपके लिये चुने हैं।

इस दोहावली का नाम 'सोया नहीं कबीर' अपने पहले दोहे से तराशा है। यह दोहावली मेरी पहली दोहावली है– दोहा प्रशसको को सौंप दी है ऐसे मौकों पर हमेशा मुझे अपना यह शे'र याद आ जाता है :

नाव कागज की छोड़ दी मैंने।
अब समन्दर की जिम्मेदारी है।।

मुझे पूरा विश्वास है कि यह दोहे आपको पसंद आयेंगे क्योंकि इन दोहो मे केवल मेरी ही बात नहीं है, सब के मन की बात है :

मैंने दिन को दिन कहा, कहा रात को रात।
मेरे दोहों में बसी, सबके मन की बात।।

–डॉ. अख़्तर नज़्मी

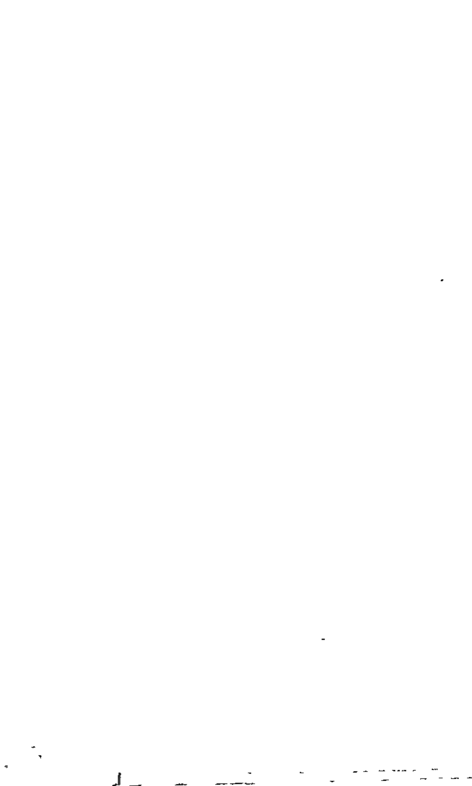
परिचय

नाम : सैयद अख़्तर जमील

शायराना नाम : अख़्तर 'नज़्मी'
पिता का नाम : स्व सैयद मुमताजउद्दीन
पूर्वजीय आवास : इलाहाबाद
जन्म : 29 नवम्बर 1931, आकोट (अकोला) महाराष्ट्र।
शिक्षा : एम ए उर्दू (स्वर्णपदक)
एम ए फारसी (प्रथम श्रेणी)
पी एच. डी उर्दू
प्राध्यापक : 1968 से शा. कमलाराजा कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय में विभागाध्यक्ष (उर्दू) तथा चेयरमैन बोर्ड ऑफ स्टडीज़, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर।
सेवानिवृत्ति : 1992
सम्मान : 'इम्तियाजे मीर' मीर अकादमी लखनऊ 1985
'सिराज मीर' अवार्ड म.प्र उर्दू अकादमी 1991-92
कृतियाँ : शबरेज़े ग़जल एवं नज़्म (उर्दू) 1984
'ख्वाबो का हिसाब' ग़ज़ल संग्रह (उर्दू) 1986
'किस तरफ कैसी हवा है' ग़जल संग्रह (देवनागरी) 1994
प्रकाशनाधीन : 1 गजल– गजल (देवनागरी में)
2. गजल परिन्दे (उर्दू)
सम्पर्क : 36/141, खुर्जेवालान, दौलत गंज
ग्वालियर – 424 001 (म प्र)

सोया नहीं कबीर

दोहे बरसे देर तक, जैसे बरसें तीर,
मैं भी जागा रातभर, सोया नहीं कबीर।
-अख़्तर नज्मी



वो युग मीठा आम था, ये युग कडवा नीम।
पहले जैसे अब कहे, दोहे कोई रहीम।।

जो देखा जो सुन लिया, करते रहे बखान।
रस जीवन में था नहीं क्या करते 'रसखान'।।

कहने वाले कह गये, कुछ दोहे रंगीन।
नाम 'बिहारी' पा गये, मौन रहे 'रसलीन'।।

नज़्में भी हैरान हैं, ग़ज़लें भी हैरान।
'नज़्मी' जी की हो गई, दोहों से पहचान।।

दोहा चलता तीर है, किसको है इंकार।
दिल से निकली बात है, दिल के निकले पार।।

और विधाएँ जुड गईं, संकेतों के साथ।
मेरे दोहे कह गये, मेरे मन की बात।।

हमसे रचनाकार भी, यहीं हुए लाचार।
कहना तो आसान है, चुप रहना दुश्वार।।

'नज्मी' सूखी झील का, सूखा है इतिहास।
नदिया मेरे ग्राम की, बहती बारों मास।।

प्यारे-प्यारे लोग हैं, बैठो इनके संग।
कलियों जैसा रंग है, फूलों जैसे अंग।।

ये सब जिसकी देन है, उसका नहीं जवाब।
चंदा जैसी नींद है, तारों जैसे ख़्वाब।।

जब खनका उसका बदन, उभरा एक ख़याल।
बंजारिन की चाल में, कितने हैं सुर-ताल।।

रिमझिम का एहसान है, मौसम का एहसान।
इन्द्र-धनुष को मिल गई, सतरंगी मुस्कान।।

'नज़्मी' की ये लालसा, ऐसा दिन भी आय।
बासंती का रूप भी, बासंती हो जाय।।

झूठी सबकी दोस्ती, झूठा सबका प्यार।
'नज्मी' जैसा खोज लो, खोज सको तो यार।।

नदिया मैली हो गई, धोये सबके पाप।
लज्जित फिर ऐसी हुई, उड़ गई बनके भाप।।

खींचा-तानी हो चुकी, दिशा-दिशा हर ओर।
अब मत खींचो सांस की, डोरी है कमजोर।।

अपना-अपना रंग है, अपना-अपना राग।
कोई पाले मोरनी, कोई पाले नाग।।

मिलजुल कर तू भी मना, सबके संग त्यौहार।
पागल अपने आप से, लडना है बेकार।।

गोरी जिसकी बाँह में, झूठा उसका खेल।
पल-दो पल का साथ है, पल-दो पल का मेल।।

गहराई थी साठ गज, घेरा था दो मील।
मौसम उसको पी गया, सूख गई वो झील।।

जनम-जनम प्यासी रहे, जल सब तक पहुँचाय।
'नज़्मी' ऐसा दान तो, नदिया ही कर पाय।।

संगीनों की नोंक पे, कौन मचाये शोर।
बाहर चौकीदार है, घर को लूटे चोर।।

बगिया को आई नहीं, अपनी सीमा रास।
गलियारे में बस गई, फूलों की बू-बास।।

सीमा छू पाया नही, दानवीर का दान।
भूखे को घर ले गया, इक भूखा इंसान।।

मैंने ही पाला नहीं, 'नज़्मी' ऐसा रोग।
वरना सबके साथ हैं, अपने-अपने लोग।।

कासा जिसके हाथ में, दर-दर मांगे खाय।
जिसके बाजू कट गये, हाथ कहाँ फैलाय।।

वैसे तो सब बावले, मजनूं, रांझा, हीर।
उनको पागल मत कहो, समझो उनकी पीर।

अपना घर तो भर लिया, मारा लंबा हाथ।
अब सबसे करता फिरे, दीन-धरम की बात।।

तू भी थक कर चूर है, मैं भी थक कर चूर ।
तेरा तो घर आ गया, मेरी मंज़िल दूर।।

चिंता जग की वो करे, जिसको जग से प्यार।
मैं सबसे बेज़ार हूं , सब मुझसे बेज़ार।।

ग्यानी-ध्यानी कह गये, इसका रखना ध्यान।
उजियारे में दम नहीं, अंधकार बलवान।।

ख़ून-पसीना भोर से करता रहा गरीब।
तब जाकर दो वक्त की, रोटी हुई नसीब।।

हमसे आकर पूछ लो, कैसा है संसार।
जैसे गाहक दिख रहे, वैसा है बाजार।।

घर पर वो बोले नहीं, बाहर धारे मौन।
'नज़्मी' पुस्तक बंद है, उसको बांचे कौन।

उसके मन को मोह लो, बोलो मीठे बोल।
छोडोगे पछताओगे, मोती है अनमोल।।

लय में सच्ची प्रीत हो, दुख में डूबे बोल।
फिर अपनी अवाज़ में, मीरा का रस घोल ।।

घर मे वो धनवान है, बाहर वो कंगाल।
ये भी उसकी चाल है, वो भी उसकी चाल।।

लोग उठाकर ले गये, चरखा, सूत, कपास।
चोरी क्या हो जायगा, क्या है मेरे पास।।

संसारी कैसे करे, लोभ-लाभ का अंत।
जब चिपके संसार से, साधू-संत, महंत।।

आदत से मजबूर है, आदत बडी अजीब।
जिस दिन खाया पेट भर, सोया नहीं ग़रीब।।

लंबे-लंबे खेत हैं, टूट रहे हैं पाँव।
दूरी पर नौ खेत की निरमोही का गाँव।।

प्यादे सब पिटते रहे, ये भी है तदबीर।
'नज़्मी'अब शतंरज से, उठते नहीं वज़ीर।।

साथ रहे इक उम्र तक, बन पाये ना मीत।
हंसों का जोडा कहे, हमसे सीखो प्रीत।।

यारों की यारी गई, छूटा सबका साथ।
जो कुछ था सब लुट गया, रह गये खाली हाथ।।

रस्ता केवल एक है, 'नज़्मी' मेरे पास।
बच्चे-वाले खुश रहें, मैं ले लूं सन्यास।।

इसके घर की बात को, उसके घर पहुंचाय।
वो सबकी निंदा करे, अपने ऐब छिपाय ।।

मज़दूरी मत काटना, इसका नहीं कुसूर।
आज नहीं ये काम का, भूखा है मज़दूर ।।

'नज्मी' ऐसा काम तो, बिरला ही कर पाय।
सबके दुख तो बांट ले, अपनी पीर छुपाय।।

नासमझी की बात है, समझे ना समझाय।
घर-आँगन की बात को, पंचों तक ले जाय।।

उसे पिला जो पी सके, सच का कड़वा घोल।
सच बोले सूली चढ़े ऐसा सच मत बोल।।

तोड़ सके तो तोड़ दे, पिंजरे का हर तार।
कहने वाले कह गये, "जीवन कारागार"।।

अंधा-बहरा हो गया, 'नज़्मी' एक मकान।
दरवाज़े में आँख थीं, दीवारों में कान।।

बीड़ी भी आधी पिये, आधी रखे बुझाय।
गरम ख़ून को बेचकर, ठंडी रोटी खाय।।

मैं तेरा हमराज़ हूँ, तू मेरा हमराज़।
पिंजरे के पंछी सिखा, जीने के अंदाज़।।

बेटी खुश ससुराल में, दुख भी होंगे चंद।
बिके नहीं पर हो गये, कंगन बाजू-बंद।।

घर बैठे वो बेचले, बाती हो या दीप।
उसका धंधा खोज ले, हर मोती का सीप।।

भारी बोझ पहाड़ सा, कुछ हलका हो जाय।
जब मेरी चिंता बढे, माँ सपने में आय।।

'नज़्मी' बात नसीब की, इसका कौन उपाय।
सपने में हीरा मिले, आँख खुले खो जाय।।

ऊँचे उसके काम हैं, लंबे उसके हाथ।
हर दिन उसकी ईद है, दीवाली हर रात।।

इन ऋतुओं मे क्यों नहीं, उन ऋतुओ की बात।
सावन मनभावन नहीं, निर्जल है बरसात।।

सबको कब उपलब्ध हैं, साधन एक समान।
पच तुम्हारे साथ हैं, मेरा है भगवान।।

जीवन खोया पा लिया, जाने कितनी बार।
इसी जनम में ले लिये, मैंने जनम हज़ार।।

मै उतरा तालाब में, तूने फैंका जाल।
आ मिल-जुल कर बांटलें, आधा-आधा माल।।

तू मुझसे राजी नहीं, रस्ता और निकाल।
छोड सके तो छोड जा, मेरे बाल-गोपाल।।

क्या माँगूं संगीत से सरगम की रसधार।
वक्त पडे पर हो गये, सातों सुर बेकार।।

काला धन किस काम का, ऐसा नाग न पाल।
अवसर मिलते ही इसे, फैंक, कुएँ में डाल।।

अपने ही जज्बात हैं अपने एहसासात।
अपनी भाषा मे कही, अपने दिल की बात।।

भूल-चूक से हो गई, छोडो भी वो बात।
लेखा-जोखा रात का, गया रात के साथ।।

छोटी-छोटी बात पर, लडने को तैयार।
जैसा ओछा आदमी, वैसा ओछा वार।।

जो जन्मा फुटपाथ पर, उसका वहीं निवास।
घर की चिंता वो करे, घर हो जिसके पास।।

'नज़्मी' का ऐसा चलन, मिलने से कतराय।
अपनों से बोले नहीं, औरों से बतियाय।।

घटना दुर्घटना बने, सुख में भी दुख पाय।
जिसका सुथरी बात पर, मन मैला हो जाय।।

मुझको तो 'नज्मी' मिला, घर जैसा आराम।
मैं जिसका मेहमान हूँ, उसका चैन हराम।।

तट पर हम प्यासे खड़े, नदिया भी मजबूर।
हम दिल्ली के पास हैं, दिल्ली हमसे दूर।।

दरवाज़ा पाबंद है, खिड़की भी असहाय।
मेरे घर में धूप भी, पिछवाड़े से आय।।

ये तेरे बस की नहीं, इसका पीछा छोड़।
ध्यान चिरैया उड़ गई, मन का पिंजरा तोड़।।

दर्ज़ी ने टाला मुझे, ये कहकर हर बार।
काज-बटन की देर है, कुर्ता है तैयार।।

अब तक तो मीठे लगे, मेरे कड़वे बोल।
बंटवारे में हो गई, नीयत डाँवाडोल।।

शब्दों पर विश्वास का, नहीं रहा ये दौर।
मन की भाषा और है, बोलचाल की और।।

सुख-सुविधा होते हुए, फिर क्यों हाहाकार।
तुम सोचो इस बात पर, मै भी करूं विचार।।

सबका शुभचितक वही, सबका हाथ बटाय।
वो सबकी विपदा सुने, अपनी कहाँ सुनाय।।

जनम कुंडली रोज ही, देखे और दिखाय।
जीवन उसका शुभघडी, खोजे, खोज न पाय।।

खिला-पिला इज्जत बचा, मत होना बदनाम।
जो धन रक्खा गाड के, कब आयेगा काम।।

साजिश ने तरकीब से, बिछा दिये हैं काँच।
तू इन पर ऐ नर्तकी, नाच सके तो नाच।।

झूठ अच्छा जिस झूठ पर, सच भी धोखा खाय।
ऐसा सच किस काम का, जिस पर गर्दन जाय।।

वैसे तो हर देश है, कर्ज़े का मोहताज।
अपना देश ऐसा नहीं, गिरवी रख दे ताज।।

मजदूरी से काम है, हमको तो श्रीमान।
क्या काजल की कोठरी, क्या हीरे की खान।।

वो समझी उससे हुई, शायद कोई भूल।
तितली की रंगत उड़ी, जब मुरझाये फूल।।

जिसने जीवन भर किये, ऊँचे पेड़ तलाश।
बेरी पर लटकी मिली, उस चिड़िया की लाश।।

उस दिन कुछ ऐसा लगा, जादू है संगीत।
जिस दिन ढोलक पर सुने, मेंहदी वाले गीत।।

विधना का कैसा नियम, अपनी समझ न आय।
दुख झेले 'बी' फाख़्ता, कौआ अंडे खाय।।

ध्यान आया इस उम्र में, जीवन किया ख़राब।
समझा तो कुछ भी नहीं, रटता रहा किताब।।

ऊँचा छत्ता शहद का, जो देखे ललचाय।
जो इतना ऊँचा उठे, फूलों का रस पाय।।

तुम चक्कर में मत पड़ो, बैठो घर मे यार।
जाने वाले जाएँगे सुनकर चीख़-पुकार।।

गाओ ठुमरी-दादरा, छू लो मन के तार।
दरबारी मत छेड़ना, नहीं रहे दरबार।।

दानवीर होते नहीं, नेता और वज़ीर।
भिखमंगों के द्वार पे, मांगे भीख फकीर।।

मेरे कारण पेड़ की, मिट्टी हुई खराब।
तुमने जड़ ही काट दी, चुकता हुआ हिसाब।।

कुछ चाँदी के तार हैं, कुछ सोने के तार।
गंगा-जमुनी रंग मे, दोहों का सिंगार।।

शोहरत है, सम्मान है, क्या है तेरे पास।
सबकी निंदा कर चुका, सुन अपना इतिहास।।

माली डूबा सोच में, किसका है ये खेल।
उसके होते पेड पर, कैसे चढ गई बेल।।

करते-करते कट गये, हर रिश्ते के तार।
माँ की ममता है वही, वही बाप का प्यार।।

बहुएँ भी तैयार थीं, बेटे भी तैयार।
मैंने उठने दी नहीं, आँगन में दीवार।।

उसके मन पर खुल गया, इसके मन का खोट।
चंचल हिरनी दे गई, मस्त हिरन को चोट।।

साफ कसौटी कह गई, सोने में है खोट।
सुनकर बहरे हो गये, दो नम्बर के नोट।।

ये कुदरत का रंग है, उंगली कौन उठाय।
बादल के आँसू बहें, इन्द्रधनुष मुस्काय।।

चतुर चिरैया जाल में, धरती के क्या आय।
वो चाहे तो नीड में, अंबर को ले जाय।।

जो दुश्मन सुख चैन के, उनसे मेल बढ़ाय।
'नज़्मी' आपने आपको, सांपों से डसवाय।।

उसने मुझसे ये कहा, छू कर मेरे पाँव।
ऐसा गलियारा बता, धूप मिले न छाँव।।

जल भी उसके हाथ का, मत करना स्वीकार।
देश-भक्त के भेस में, फिरता है ग़द्दार।।

छोड मोह संतान का, कहना मेरा मान।
वो सोना किस काम का, ज़ख़्मी कर दे कान।।

जिसने ऐसे दुख सहे, समझे मेरी पीर।
कांटों ने परिवार के, जर्जर किया शरीर।।

कोरे पन्नों ने किया, वितरित अपना ज्ञान।
स्वयं मुझे करना पडा, शब्दों का सम्मान।।

काँटों का जंगल इधर, उस झाड़ी में शूल।
मैं भी तोड़ूं सब नियम, तू भी तोड उसूल।।

शब्दों ने तो कर दिया, जुडने से इंकार।
कुछ विचार ढोते रहे, कलाकार का भार।।

आये मुट्ठी बांधकर, जाये हाथ पसार।
दिया-लिया काम आयगा, सुन ले मेरे यार।।

सब पर रौशन हो गया, मेरे दिल का दाग़।
अंधियारा था, रख दिया, मैने एक चिराग़।।

यूँ जीने से बस गया, मन में खौफ़-हिरास।
दाना चक्की मे रहे, ज्यों खूँटी के पास।।

कब से गोते खा रहा, बेचारा विकलाँग।
तू डूबा किस सोच में, जल्दी मार छलाँग।।

साधू-संतों में रहा पकडे सबके पाँव।
ध्यान-ज्ञान के वृक्ष की, पडी न दास पर छाँव।।

रखने वालो ने रखा, उसका नाम दिलेर।
पिंजरे मे पैदा हुआ, ये सरकस का शेर।।

दोनों में पानी नहीं, बहता है तेज़ाब।।
इन नदियों के नाम हैं, चंबल और चिनाब।।

मुझको ही दोषी कहे, हरदम मेरी पीर।
मैंने तो लिक्खी नहीं, ख़ुद अपनी तक़दीर।।

वृद्धावस्था हो भले, बचपन भी है संग।
उसने रक्खी सेंतकर, चरख़ी, डोर पतंग।।

भाग-दौड़ में लग गये ढोंगी रिश्तेदार।
शायद जीवन जेल से, क़ैदी हुआ फ़रार।।

सच कहने से जो डरे, उसके मुंह में ख़ाक।
उजियारा नापाक है, अंधियारा है पाक।।

अगला पन्ना खोल के, पढ़ ले मेरा लेख।
तस्वीरें बेजान हैं, तस्वीरें मत देख।।

जो भी तुमने पढ लिया, कर बैठे विश्वास।
ये तुमसे किसने कहा, सच्चा कर इतिहास।।

झूठे काग़ज़ ले गया, भाई उस के पास।
रिश्ता तो कायम रहा, टूट गया विश्वास।।

भौंरे ने क्या पा लिया, बनकर दावेदार।
तितली को चाहत मिली, फूलों से हर बार।।

मैं टूटा तो क्या हुआ, टूटा नहीं उसूल।
हमदर्दी की भीख पर, जीना नहीं कुबूल।।

मैं धोने आया नहीं, तुझमें अपने पाप।
गंगा मैया दे मुझे, तू भी कोई शाप।।

हम तो कुछ बोले नहीं, खडे रहे चुपचाप।
दरवाज़े ने कह दिया, बाबा रस्ता नाप।।

सीधे मुँह करता नहीं, कभी किसी से बात।
पहले हाथ उसका बढ़े, तभी मिलाना हाथ।।

बाग़-बगीचे घूमते, हम फिरते हैं यार।
अपना फूलों का नहीं, साँपों का व्यापार।।

बना रहे तो ठीक है, सदा विरोधाभास।
सुविधाएँ कुछ आ गई, विपदाओं के पास।।

वैसे उसके पास है, उजियारा बेदाग़।
फिर भी मेरे सामने, जलता नहीं चराग़।।

छोटा दिल करना नहीं, होना नहीं निराश।
चंदन वन मिल जायेगा, करते रहो तलाश।।

चिंतन बदली कर रही, दोहों की बौछार।
कठिन विधा ने कर लिया, सहज मुझे स्वीकार।।

ऐसा तो कुछ भी नहीं, सब भूखे रह जाँयं
बात हमारी और है, तुम परसो तो खाँयं।।

थाली से थाली लडे, दाँता-किलकिल होय।
वो भोजन किस काम का, भूखे रहिये सोय।।

कांटों वाले पेड की, नहीं चुभेगी छाँव।
मखमल के इस फर्श पर, रखो संभल के पाँव।।

वो बादल तो मिट गया, जो कंचन बरसाय।
तुम चाहोगे दीप भी, हवा जलाने आय।।

माँग सको तो माँग लो, दीवारों से आड।
घर का परदा रख सके, ऐसे नहीं किवाड़।।

मुझसे तो करवा लिया, जबरन जुर्म कुबूल।
आखिर वो पकडा गया, जिसने तोड़े फूल।।

भेदभाव किस काम का, ये है एक जुनून।
ईश-वंदना कीजिये, जिससे मिले सुकून।।

मिलने को अवसर मिले, मुझे बहुत रंगीन।
मुझसे मेरे देश की, छूटी नहीं ज़मीन।।

लाज-शर्म की बात पर मूरख करे घमंड।
उपदेशों की आड़ में फैलाये पाखंड।।

पोथी-पुस्तक बाँच के, ज्ञानी बने महान।
अंदर से तो बंद हैं, सारे रौशनदान।।

खैंच सको तो खैंच लो, लम्हों की तस्वीर।
दोहे क्या कह पाओगे, कह गए दास कबीर।।

घने पेड़ की मिल गई, ठंडी-ठंडी छाँव।
पहले चादर देख लो, फिर फैलाना पाँव।।

फूलों को अच्छा लगा, उसका ये अंदाज़।
तितली सुनकर आ गई, ख़ुश्बू की आवाज़।।

आड़ा-तिरछा रास्ता, दावा और दलील।
चलिये सीधी राह पर, कांटा लगे न कील।।

टूटा दिल इंसान का, कोई जोड़ न पाय।
हड्डी तो निरलज्ज है, टूटे फिर जुड़ जाय।।

अपनालो चाहो अगर, तुम भी मेरी राह ।
नेकी तो छुप कर करो, खुलकर करो गुनाह।।

फाँद सको तो फाँद लो, ये ऊँची दीवार।
फिर तुमको मिल जायगा, खुला हुआ हर द्वार।।

ये सब कुछ अच्छा नहीं, मेरा सुनो सुझाव।
टेढे रस्ते आए तो, सीधे रस्ते जाव।।

जीवन ने अवसर दिया, कच्ची डाली मोड़।
फूल उगाना सीख ले, काँटे बोना छोड़।।

जर-ज़मीन लिखवा गया, पहले साहूकार।
मेरा घर तुड़वा गयी, फिर आकर सरकार।।

इस काले दरबार में, नेताओं का राज।
राजाओं के ताज थे, ये राजा बेताज।।

जोकर हैं इस बार तो, मेरे पास अनेक।
मेरी बाज़ी हो गई, जल्दी पत्ता फैंक।।

मेरे पल्ले कुछ नहीं, सुनले मेरे मीत।
दिल जैसी इक चीज़ है, जीत सके तो जीत।।

बेटा जब दूल्हा बना, निकली जब बारात।
मैंने होती देख ली, नोटों की बरसात।।

जब छीने संसार ने, जीने के सामान।
तब मेरे मन में जगा, जीने का अरमान।।

हाथों में सबसे रहा, ऊँचा मेरा हाथ।
आवाज़ों के शोर में, दबी न मेरी बात।।

सुनने को सुनता रहा, मैं सबकी बकवास।
मेरा अपना है वही, जो है मेरे पास।।

अपनी कश्ती ले उडे, कर गये सब में छेद।
मैं चाहूँ तो खोल दूँ, उन लोगों के भेद।।

बहुत पुरानी बात है, दोहराते दुख होय।
धन-दौलत तो बाँट ले, दर्द न बाँटे कोय।।

मत जा तू उस हाट में, मची हुई है लूट।
आँखों देखी बात है, सच माने या झूट।।

कौन घड़ी में छोड़ के निकले अपना गाँव।
सीने पर तलवार है, काँटों पर हैं पाँव।।

जीवन भर लड़ता रहा, कभी न देखी हार।
हाथ दबा पत्थर तले, तब छूटी तलवार।।

भाग्य विधाता ने लिखा, किसका रोना रोय।
कुछ माँगे तो कुछ मिले, कुछ बोये कुछ होय।।

होता है होता रहे, घर में युद्ध महान।
अपना क्या खाया, पिया, सो गये चादर तान।।

मैंने कुछ सीखा नहीं, रहकर उसके साथ।
उसके भी दो हाथ हैं, मेरे भी दो हाथ।।

नदिया तट पर मैं खड़ा, मुट्ठी में है रेत।
वो बूझे इस बात को, जो समझे संकेत।।

अनहोनी होती नहीं, सिद्ध हुई ये बात।
उस गिरती दीवार को, रोक न पाये हाथ।।

उसने तो बिखरा दिये, नये करारे नोट।
असली-नकली छॉट ले, हो सकती है चोट।।

मैंने सब कुछ लिख दिया, विपदाओं के नाम।
सुविधाएं करने लगीं, दूर कहीं विश्राम।।

चिंता-विपदा भूल जा, मत कर नींद हराम।
संकट में सब ही जिये लछमन हों या राम।।

उसने भी दे ही दिया, कुछ दाता के नाम।
मुझको भी देने पड़े समझौते के दाम।।

भेद-भाव की भावना, जितनी कुचली यार।
उतनी पैनी हो गई, कुंद छुरी की धार।।

तीर हमारा जब चले, छाती में घुस जाय।
लक्ष्य हमारा तू बने, दिन ऐसा न आय।।

उनकी छाती पर नहीं, लगा व्यंग का तीर।
अंधों से अच्छी रही, बहरों की तकदीर।।

बड़ी अमानत रख गया, कोई मेरे पास।
जब मुझ पर से उठ गया, औरों का विश्वास।।

ऐसा हो तो क्या कहे, क्या होगा अंजाम।
जब दाता खुद ही कहे, दे दाता के नाम।।

दाँये-बाँये जाल है, आगे पीछे जाल।
जैसा तेरा हाल है, वैसा मेरा हाल।।

अच्छी फसलें काट लो, बढ़िया डालो खाद।
ये सुन कर भी छिड़ गया, लंबा वाद-विवाद।।

दरवाज़े ने कर दिया, खुलने से इनकार।
मुझको धोका दे गया, मेरा शस्त्रागार।।

मैंने तो चाहा बहुत, खुशियाँ हों खुशरंग।
लगते-लगते लग गया, हर ख़्वाहिश पर जंग।।

सोच समझकर दे मुझे, जो देना है ज्ञान।
भले बुरे की हो गई, थोड़ी सी पहचान।

पागलपन बरसाएगी, घर में चीख-पुकार।
सुनले जब तक सुन सके, पायल की झनकार।।

तुम सच मानोगे नहीं, सच मत मानो जाव।
भरते-भरते भर गये, मेरे सारे घाव।।

लोगों में चर्चा हुई, धार लिया है मौन।
मैंने सब कुछ कह दिया, ये समझेगा कौन।।

तुमने उसको कर दिया, घर से बेघर यार।
और उसे मिल जायँगे तुम जैसे दो चार।।

कष्ट स्वयं को दीजिये, औरों को आराम।
ऐसा होता है सदा, महापुरुष का काम।।

तू उसको समझा नहीं, ले सकता है जान।
पंच नहीं सरपंच है, उसका कहना मान।।

अवसरवादी को मिले, सब इच्छा अनुसार।
जीवन जीना सीख ले, बनके दुनियादार।।

जिस दिन से इनको मिले, बारूदी हथियार।
सब बच्चों ने फेंक दीं, लकड़ी की तलवार।।

तूफ़ानी बरसात हो, या दीवानी धार।
हर पानी को काट दे, ऐसी हो पतवार।।

हर अच्छे इंसान के, अच्छे नेक विचार।
इस रिश्ते से देखिये, सब हैं रिश्तेदार।।

दुनिया को दुखदर्द के, किस्से बहुत सुनाय।
आँसू कागज़ पर गिरें, तब दोहे कह पाय।।

हर घर में चर्चा हुई, घर-घर हुआ प्रचार।
भिक्षुक ने उस द्वार से, भिक्षा की स्वीकार।।

बाहर चलने को हुई, पल भर में तैयार।
गोरी का तो हो गया, बिन जेवर सिंगार।।

पाप करो तो पाप है, पुण्य करो तो पाप।
अपने युग में बन गया, जीना भी इक शाप।।

चलती चक्की देख के, दिया कबीरा रोय।
तूने तो देखी नहीं, तुझको दुख क्यों होय।।

जिसने भी रस्ता दिया, पहुँचा उसके पास।
पानी पर से उठ गया, नदिया का विश्वास।।

मन खट्टा हो तो उठे, कैसे मीठा राग।
खारे पानी से उठे, खारा ही विश्वास।।

पढ़ते-लिखते हो कभी, समझोगे क्या ख़ाक।
रमता जोगी सिद्ध है, बहता पानी पाक।।

इतनी जल्दी भी नहीं, कर तो सोच विचार।
अंधे की लाठी बनो, निर्बल की तलवार।।

फिर मैं दूँगा मशवरा, फिर मैं दूँगा राय।
इस पुस्तक के बाँचले, पहले कुछ अध्याय।।

भाग, यहाँ से भाग जा, जल्दी, मतकर देर।
मारे बिन छोड़े नहीं, ज़ख़्मी होकर शेर।।

फाकों से बेहाल था, बस्ती का फ़नकार।
ज़हर मिला तो खा लिया, क्या करता लाचार।।

अफवाहों तक ठीक है, अफ़वाहों की बात।
चींटी, हाथी ले उड़े, उसकी क्या औकात।।

जिसने बिन माँगे किया, अपना सब कुछ दान।
कब उसको दरकार है, मान और सम्मान।।

मैं जानूँ इस बात को, या जाने भगवान।
जीवन के हर खेल में, लगी दाँव पर जान।।

जोडा भी तो क्या जुडा, मिट्टी-पत्थर-रेत।
मिट्टी में मिल जायेंगे, बंगला-कोठी-खेत।।

बारी-बारी बिक गये, कँगन-चँदन-हार।
अब उसके घर मे नहीं, ताँबे का इक तार।।

कब तक ये नाटक करे, इस युग का इन्सान।
मजबूरी के नाम पर, त्याग, दान, बलिदान।।

फिर हम दोनों क्यूँ करें, आपस में तकरार।
तेरा कुछ व्यापार है, मेरा कुछ व्यापार।।

किया तीसरी आँख ने, सदा मुझे -हुशियार।
आजा कायर सामने, कर आगे से वार।।

किस्मत थी जो हो गया, मेरा तेरा मेल।
जब तक मेरे साथ है, मत करना कुछ खेल।।

मुझको तो अच्छी लगी, जग की उलटी रीत।
अपने तो बैरी बने, बैरी बन गये मीत।।

सिद्ध-पुरुष के हो गये, तंत्र-मंत्र बेकार।
ग़लत आस्था जब करे, गलत करे व्यौहार।।

दान मिला तो कब लिया, कब माँगी खैरात।
'नज़्मी' जी हर दम रहा, ऊँचा मेरा हाथ।।

धन-दौलत ने कब दिया, सदा किसी का साथ।
धन रेखा होते हुए, खाली मेरे हाथ।।

शहँशाह ऊँचे उठे, ऊँचे उठे वज़ीर।
उनसे भी ऊँचे उठे, साधू-संत-फ़कीर।।

जो चाहा पाया नहीं, जो पाया सब हेच।
फेरी वाला चल दिया, कूड़ा-कचरा बेच।।

तूने मेरे हाथ से, खैंचा अपना हाथ।
तूने छोड़ा तब छुटा, तेरा मेरा साथ।।

तस्वीरों में भर दिये, काले-पीले रंग।
जलते घर देखे नहीं, आजा मेरे संग।।

कारीगर के मौन को, समझे उसका यार।
चोर चुराकर ले गये, चोरी के औज़ार।।

मैं रोया-तड़पा नहीं, खाई गहरी चोट।
जब मुझ पर ज़ाहिर हुआ, अपने मन का खोट।।

अपने को दोषी कहा, मैंने तो हर बार।
औरों ने अच्छा किया, ठीक किया व्यौहार।।

श्रद्धा जिसके मन नहीं, उस पर क्या इल्ज़ाम।
अपने हाथों से करो, अपने सारे काम।।

मुझको नींद आई नहीं, सो गये घर के लोग।
ये उनकी तक़दीर है, ये है मेरा रोग।।

ऊँचा सर ऊँचा रहे, ऐसी कर तरकीब।
हारा भी तो क्या हुआ, हारा नहीं नसीब।।

समझाने से क्या हुआ, समझाया सौ बार।
रोका उसको इस तरफ, वो पहुँचा उस पार।।

कँठ सुरीला मिल गया, सरगम कौन बताय।
सम तक वो पहुँचे नहीं, बेताला हो जाय।।

गुरू मिला ना गुर मिला, सरगम कौन बताय।
साज़ पकड़ना सीख ले, फिर मिज़राब, उठाय।।

बातो से बातें कटीं, कटी [illegible] ।
तुझ पर क्यों भारी पडा, दुश्मन [illegible]

जंगल के इक शेर की दहशत चारों ओर।
हर घर में मिल जायँगी, चींटी आदमखोर।।

साथ-साथ दोनों चले, किया न इस पर ग़ौर।
उसका रस्ता और है, मेरा रस्ता और।।

जो बोया काटा नहीं, वक़्त किया बरबाद।
अब बैठे करते रहो, भले समय को याद।।

ोरी पकडे साँस की, बैठा आस लगाय।
गुड्डा घोड़ी चढ़े, कब गुड़िया घर आय।।

बाप का, निकला ऐसा वीर।
को बाँध ले, जब फैंके ज़ंजीर।।

नहीं, बातें बहुत बनाय।
सुने, ना अपनी कह पाय।।

समझाने से क्या हुआ, समझाया सौ बार।
रोका उसको इस तरफ, वो पहुँचा उस पार।।

कँठ सुरीला मिल गया, सरगम कौन बताय।
सम तक वो पहुँचे नहीं, बेताला हो जाय।।

गुरू मिला ना गुर मिला, सरगम कौन बताय।
साज पकड़ना सीख ले, फिर मिजराब उठाय।।

बातों से बातें कटीं, कटी डोर से डोर।
तुझ पर क्यों भारी पडा, दुश्मन था कमज़ोर।।

जैसा मैं नचवाऊँगा, नाचेगी हर ओर।
अब है मेरे हाथ में, कठपुतली की डोर।।

कुछ रिश्ते इस पार हैं, कुछ रिश्ते उस पार।
सरहद पर खेंचे गये, काँटों वाले तार।।

जंगल के इक शेर की दहशत चारों ओर।
हर घर में मिल जायँगी, चींटी आदमखोर।।

साथ-साथ दोनों चले, किया न इस पर गौर।
उसका रस्ता और है, मेरा रस्ता और।।

जो बोया काटा नहीं, वक्त किया बरबाद।
अब बैठे करते रहो, भले समय को याद।।

डोरी पकड़े साँस की, बैठा आस लगाय।
कब गुड्डा घोड़ी चढ़े, कब गुडिया घर आय।।

बेटा, कायर बाप का, निकला ऐसा वीर।
लौह पुरुष को बाँध ले, जब फैंके जंजीर।।

सोचे-समझे कुछ नहीं, बातें बहुत बनाय।
ना तो औरों की सुने, ना अपनी कह पाय।।

उसका लोहा मान लो, दूजा नहीं उपाय।
लौह पुरुष के पॉव में, को बेडी पहनाय।।

दूर बहुत हैं देख लो, जो लगते हैं पास।
अपनों पर से उठ गया, अपनों का विश्वास।।

नदिया ने मुझसे कहा, मत आ मेरे पास।
पानी से बुझती नहीं, अंतरमन की प्यास।।

कौन करे कैसे करे, मानव का उद्धार।
मानवता करती रहे, कब तक हाहाकार।।

हर बंजारन तीर है, बंजारा तलवार।
उन डेरों के फेर में, तू मत पडना यार।।

राजनीति खेले सदा, बच्चों जैसा खेल।
कभी लड़ाई हो गई, कभी हो गया मेल।।

धरती पर फूले-फले, पर्वत पर हरयाय।
सदा उगे दोहा लता, सदा फैलती जाय।।

ऐसा कुछ खतरा नहीं, कहने लगा दलाल।
अपना गुर्दा बेच दे, हो जा माला-माल।।

हीरा जनमें कोयला, मोती जनमे सीप।
हमने रौशन कर दिये, दीवाली के दीप।।

जब दिल दिल से मिल गये, मिले हाथ से साथ।
अब तो हर दिन ईद है, दीवाली हर रात।।

जादूगर की मोरनी, चाहे परी कहाय।
मेरी इतनी अर्ज़ है, मेरे पास न आय।।

तेज आंच पर तप गये, गौ रस भरे कढ़ाव।
अब तो कर दे चन्द्रमाँ, अमृत का छिड़काव।।

नासमझी में फँस गया हुआ हाल बेहाल।
मगरमच्छ में पड गया मछुआरे का जाल।।

मित्रों में ही मिल गई, ज़िन्दा एक मिसाल।
लंगडा कौआ जब चला, चला हंस की चाल।।

दीन-धर्म के नाम पर, बहे रक्त की धार।
आपस में टकरा गये, जब-जब तुच्छ विचार।।

कुछ ऐसा बढिया लिखो सबके मन को भाय।
ऐसा दोहा मत पढ़ो, श्रोता हाथ न आय।।

अपना-अपना भाग्य है, किस्मत है श्रीमान।
पत्नी सबको कब मिली, जग में मित्र समान।।

लाखों में खेले कोई, माँगे कोई दान।
जग में अवसर कब मिले, सबको एक समान।।

संभव है रखना पड़ें, गिरवी अपने प्राण।
देकर ही गुरुदक्षिणा, चढा धनुष पर वाण ।।

अच्छा है हम तुम रहें, सीमाओं में बंद।
इतनी गहरी दोस्ती, मुझको नहीं पसंद।।

काई पर फिसले नहीं, कभी हमारे पाँव।
उसने धक्का दे दिया, जब पहुँचे इस ठाँव।।

नादानी के खेल का, कोई नहीं निदान।
जलते रथ पर बैठकर, कहाँ चले श्रीमान।।

तू अपना ले झूठ को, खूब कमा ले नाम।
मेरा तो चल जायेगा, सच्चाई से काम।।

चिट्ठी लिखकर भेज दी, तूने मेरे नाम।
घर वालों ने कर दिया, मेरा चैन हराम।।

मुझको यार खरीद ले, देकर दूने दाम।
आज अगर आया नहीं, कब आयेगा काम।।

पेड कभी लेता नहीं, घनी छाँव के दाम।
रस्ते में थक जाय तो, कर लेना आराम।।

सबके मन को भा गया, वो मोती अनमोल।
अच्छे अच्छों की हुई, नीयत डाँवाडोल।।

झूठा वादा फिर किया, रहा न इसका ध्यान।
पीछे अपनी बात के, ज़िन्दा है इंसान।।

मैंनें तो समझा सदा, काँटों को भी फूल।
मुझसे ग़लती हो गई, तू मत करना भूल।।

नीयत किसकी देखकर, हो गई डाँवा डोल।
ये तो तेरा घर नहीं, यहां झूठ मत बोल।।

तकती ही रह जायेगी, हत्यारों की भीड।
वो पँछी उड़ जायेगा, लेकर अपना नीड़।।

हर सुगँध से हो गई, जब मेरी पहचान।
टुकडे-टुकडे कर दिया, कमरे का गुलदान।।

एक सबक मुझको हुआ, बिना पढ़े ही याद।
काग़ज़-पुस्तक कुछ नहीं, सब कुछ हैं उस्ताद।।

मैं ख़ुद को भी पा गया, ये कैसा संयोग।
रस्ते में मिलते रहे, नये पुराने लोग।।

मैं मिलने आ जाऊँगा, जब आयेगी याद।
तुम अपनी दुनिया करो, और कहीं आबाद।।

शोध कार्य करने चला, किया स्वयं पर शोध।
जीवन परिचय में हुआ, निराकार का बोध।।

काली पुस्तक में रहा, बंद सदा कानून।
होने को तो हो गया, साबित हुआ न ख़ून।।

जीवन भर उनको रही, जिन फूलों की चाह।
उन फूलों से अब सजी, ग़ालिब की दरगाह।।

जब आँखों में झौंक दी, संबंधों ने रेत।
टुकडे-टुकडे हो गये, मेरे सारे खेत।।

फूलों ने कुचले नहीं, दोनों के जज़्बात।
तितली भँवरे से लड़ी, नहीं सुनी ये बात।।

जिन लोगों के वास्ते, है रिश्वत इनआ़म।
उन लोगों ने कर दिया, दीन-धरम बदनाम।।

रिश्वत का आया कभी, मुझ पर जो इल्ज़ाम।
मैंने उसको दे दिया, नजराने का नाम।।

जैसी बस्ती में रहो, चलन वही अपनाव ।
इस बस्ती की रीत है, मारो या मर जाव।।

जो होना था हो गया, ये किस्मत की बात।
इस छोटी सी बात पर, क्या रोना दिन रात।।

पहुंचे रेगिस्तान में, कैसी हो गई भूल।
छोड़े अपने गांव के, पीपल और बबूल।।

खेतों में खलिहान में, खेली जिसके सँग।
वो आ जाये तो लगे, गोरी उसके अँग।।

चोरों का डर था जहाँ, हुई वहीं पर शाम।
नासमझी में फँस गये, अब क्या होगा राम।।

बैठो मेरे दर्द को, समझो मेरे यार।
सब कुछ मेरे पास है, फिर भी हूँ लाचार।।

अपने प्रश्नों के दिये, मैंने स्वयं जवाब।
उसने अपने हाथ से, छोड़ी नहीं किताब।।

संकट में ऐसी घड़ी, रास कभी न आय।
अंडे-बच्चे छोड़ के, जब चिड़िया उड़ जाय।।

इस बीमारी से मरे, जाने कितने लोग।
मुझको लग पाया नहीं, अहँकार का रोग।।

मुँहबोले रिश्ते सभी, मुँहबोले हैं यार।
सगा भाई देता नहीं, सगे भाई को प्यार।।

भाईचारा बढ़ गया फेंक दिये हथियार।
फिर आपस में ठन गई, ढूँढो फिर तलवार।।

कोई क्या देगा उसे, यार बुरा मत मान।
अपने ही घर में रहे, बनके ज्यों मेहमान।।

उतने में चल जायेगा, है जितने का नोट।
पर सोने के भाव है, अब सोने की खोट।।

जो सोने का पारखी, वह भी है हैरान।
किसी कसौटी को नहीं, सोने की पहचान।।

असली घोड़े पर कसी, फटी-पुरानी जीन।
खच्चर पहने फिर रहे, जंजीरें जर्रीन।।

यार निरन्तर शोध से, मिला न कोई ज्ञान।
नकली चेहरों से हुई, असली की पहचान।।

आगे काम आया नहीं, कोई नया उसूल।
मेरे पीछे पड गई, मेरी पहली भूल।।

दीवारों पर है लिखा, सतरंजी इतिहास।
उसी महल मे था कभी, मेरा भी रनिवास।।

अपने प्रश्नों के दिये, मैंने स्वयं जवाब।
उसने अपने हाथ से, छोड़ी नहीं किताब।।

संकट में ऐसी घड़ी, रास कभी न आय।
अंडे-बच्चे छोड के, जब चिड़िया उड़ जाय।।

इस बीमारी से मरे, जाने कितने लोग।
मुझको लग पाया नहीं, अहँकार का रोग।।

मुँहबोले रिश्ते सभी, मुँहबोले हैं यार।
सगा भाई देता नहीं, सगे भाई को प्यार।।

भाईचारा बढ़ गया फेंक दिये हथियार।
फिर आपस में ठन गई, ढूँढो फिर तलवार।।

कोई क्या देगा उसे, यार बुरा मत मान।
अपने ही घर मे रहे, बनके ज्यों मेहमान।।

मैंने ज्ञान अर्जित किया, मैंने बाँटा ज्ञान।
खुद से लेकिन हो सकी, कब मेरी पहचान।।

काँटों वाली लाएगा, जब दुश्मन जंजीर।
ज़हरीले कर के रखो, अपने-अपने तीर।।

इक-दूजे का कर रहे, गुरू शिष्य-सम्मान।
किसी और ने कब दिया, इन दोनों पर ध्यान।।

कैसे भूलूँगा भला, जीवन भर उपकार।
पार उतारा आपने, मैं कब उतरा पार।।

मेरी कुटिया का पता, कोई खोज न पाय।
मेरे घर का रास्ता, सब के घर तक जाय।।

कुछ दिन तो चल जाएगा, फिर क्या होगा हाल।
चौराहे पर गिर गया, अगर लूट का माल।।

जो पीड़ा झेले नहीं करता रहे बखान।
दर्द भला उससे कहे, क्या कोई इंसान।।

अब तक है कोशिश यही, जब तक भी चल पाय।
कोई मेरे द्वार से, खाली हाथ न जाय।।

किसने देखा कब लुटा, किसका घर संसार।
राज सिंहासन डोलते, देखे सबने यार।।

आगे मौसम क्या पता, गर्म मिले या सर्द।
आ मिलजुल कर बाँट लें, आपस में दुख-दर्द।।

अमर ज्योति है एक ही, मिलना है दुश्वार।
आँधी मे बुझता नहीं, दीप प्यार का यार।।

दंगे का नाटक करो, चीखो शोर मचाव।
नेताजी कब से खडे, करने बीच-बचाव।।

वो खुद ऐसे हो गया, मेरे दिल में बंद।
चिंतन से जैसे जुड़े, नया रसीला छँद।।

ऐसा ही हरदम हुआ, तेरे-मेरे सँग।
मैंने समझौता किया, तूने छेड़ी जँग।।

बगिया से करना पड़ा, पतझड़ को प्रस्थान।
मौसम ने धारण किये, भड़कीले परिधान।।

इस छोटी सी बात पर, किसको होगा हर्ष।
उसको पागल कर गया, फूलों का स्पर्श।।

केवल मेरा ही नहीं, सबका यही सुझाव।
सबको ही गहरे लगे, अपने-अपने घाव।।

सद्इच्छा, सद्धारणा, सद्विचार, सद्भाव।
बाहर-बाहर से नहीं, सीना चीर दिखाव।।

ऐसा-वैसा आदमी, क्या समझे संकेत।
बिन बादल वर्षा हुई, गीली हो गई रेत।।

सूरज तो दिन भर रहा, तेरे-मेरे साथ।
बादल डस गये चाँद को, हो गई काली रात।।

कितना वो मजबूर है, कितना है लाचार।
जिसका घर ही बन गया, उसका कारागार।।

प्रीत नहीं स्वीकारना, प्यार नहीं स्वीकार।
पीड़ा मेरी मीत है, दुख है मेरा यार।।

अपना जीवन खुद जिया, सबसे रहकर दूर।
तन्हाई करती रही, मुझको चकनाचूर।।

पल-दो पल का साथ हो, या बरसों का साथ।
कपटी आपस में करें, कभी न खुल के बात।।

न्याय नहीं अन्याय है, मैं कहता हूँ साफ।
सुख बांटो तो दुख मिले, ये कैसा इंसाफ।।

धन-दौलत के पास से, गुज़रे आँख चुराय।
रंगरूप को देखकर, नज़रें झुका न पाय।।

सब पर तो चलता नहीं, दौलत का हथियार।
इंसानों में हो सका, तेरा नहीं शुमार।।

तब की शिक्षा भूल जा, अब है ऐसा दौर।
गुरुबानी कुछ और है, संत कहे कुछ और।।

निंदा ही करते रहे, हम जिसकी दिन रैन।
जब वो आया सामने, नीचे हो गये नैन।।

बस्ती में जिसके रहे, सबसे नीच विचार।
सबसे ऊँचा घर बना, उसका मेरे यार।।

डर सच कहने में नहीं, सारे नेता भ्रष्ट।
सुविधा भोगी ये बने, जनता झेले कष्ट।।

कड़ी धूप को चाँदनी, कहकर वो मुस्काय।
राम करे इस बात को, कोई समझ न पाय।।

मैं तो खाली हाथ हूँ, मैं उतरूँगा पार।
ले डूबेगा देखना, तुझको तेरा प्यार।।

तेरी नौका जल गई, सुनकर होगा खेद।
तूने मेरी नाव में, एक किया था छेद।।

मन में अपने छलकपट, कल था और न आज।
बोली हमसे प्यार की, बोला सकल समाज।।

सच्चे रस्ते पर चलो, आओ मेरे साथ।
मैं तो करता ही नहीं, हेर-फेर की बात।।

पल-पल घटता ही रहा, मेरे तन का नाप।
जीवन भर डसते रहे, अंदर-अंदर साँप।।

उलझन में कैसे पड़े, वो किससे टकराय।
'नज्मी' अँधी गैल पर, चले न ठोकर खाय।।

उससे यारी मत बढ़ा, जो है सबका यार।
हर चाबी से जो खुले, वो ताला बेकार।।

होने दे जो हो गया, सबका ख़ून सफ़ेद।
औरों को तो मत बता, आपस का मतभेद।।

कोठी में घटना घटी, रोया चौकीदार।
कोई कुछ बोला नहीं, चुप हैं सब अख़बार।।

अपने आँसू पोंछकर, दी मुझको मुस्कान।
बहुत बड़ी ये बात है, बहुत बड़ा एहसान।।

अपने मजहब का मुझे, तब आया है ध्यान।
मुझसे जब उसने कहा, मेरा धर्म महान।।

खून-खराबा हो चुका, अब तो कर ले मेल।
बस्ती-बस्ती हो चुका, अंगारों का खेल।।

याद आया है आज ही, कुदरत का कानून।
काम आता है वक़्त पर, क्यों अपना ही खून।।

जात-पात मत पूछना, जल्दी करो उपाय।
ये बच्चा बच जायेगा, खून अगर मिल जाय।।

कूड़ा-करकट जानकर, सब जिनको ठुकरायें।
झाड़ू चलती रेल में, बच्चे वही लगायें।।

मेरी सीधी बात में, मत खोजो संकेत।
मुट्ठी में मोती मिला, मिली सीप में रेत।।

नीच-ऊँच को दाब दे, वह बातें भी छेड़।
छाया उतनी ही घनी, जितना नीचा पेड़।।

इस दुर्लभ भँडार को, लूट सके तो लूट।
जो सच से अच्छे लगें, ऐसे हैं कुछ झूट।।

इधर-उधर मुंह मारना, काम बहुत है नीच।
अपनी खेती जोत ले, अपनी बगिया सींच।।

हर पुस्तक भंडार से, गुज़रूँ नज़र बचाय।
कोरा काग़ज़ देख के, मन मेरा ललचाय।।

रोना-धोना छोड़ के हँसकर समय गुज़ार।
कहने वाले कह गये, जीवन के दिन चार।।

लाखों में से खोजकर, लाओ एक मिसाल।
आँधी में जिस पेड़ की, झुकी न कोई डाल।।

बादल अपनी बाँह में, लेकर फिरता चाँद।
कभी-कभी तो रोशनी, पड़ जाती है माँद ।।

तुलना क्यों करने चला, अपनी मेरे संग।
तूने जीता मोरचा, मैंने जीती जंग।।

सूरज तक पहुँचा सको, पहुँचा दो ये बात।
मेरे घर में बस गई, क्यों अँधियारी रात।।

दुल्हन जैसी सज गई, आँगन की दीवार।
लता-कुंज में लग गया, फूलों का अंबार।।

तू हमसे दामन भरे, तेरी क्या औक़ात।
शूलों जैसी चुभ गई, फूलों की ये बात।।

ज्यों हँसा मोती चुगे, तोता कुतरे आम।
यूँ ही हर पंछी करे, अपना-अपना काम।।

इस पर भी वो खुश नहीं, सम्बंधी नादान।
और दान वो क्या करे, करके कन्या दान।।

जितने बढ़ते जायेंगे, मन के अंदर छेद।
उतना बढ़ता जायेगा, आपस का मतभेद।।

वो चादर दे दो मुझे, छुपा सके जो घाव।
अपने कपडे नाप के, सब मुझसे ले जाव।।

दुनिया ऐसा घर नहीं, जो सबको अपनाय।
प्रेमद्वार हरदम नहीं, कभी-कभी खुल पाय।।

लिखना तो चाहे बहुत, लेकिन क्या लिख पाय।
कोरा कागज़ गोदकर, मन ही मन पछताय।।

जिसने जल की चाह की, लौटा बहुत उदास।
कोरी मटकी देख के, बुझ गई मेरी प्यास।।

मिट्टी पानी, जल, हवा, कहने को बेजान।
जितना जो कमज़ोर है, उतना ही बलवान।।

संकोची जीवन मिला, कुछ कहते सकुचाय।
अपने मन की पीर को, मन में रखे छुपाय।।

चिंताओं की भीड़ है, लाखों हैं जंजाल।
फिर भी हमको देख लो, दिखते हैं खुशहाल।।

ठीक होगा अंजाम भी, अच्छा है आग़ाज़।
ये सुमिरन करते चलो, नानक नाम जहाज।।

इतनी है मुझमें समझ, तुम भी थे मजबूर।
अब तक तो मैं भी रहा, सच्चाई से दूर।।

उसके कहने पर चला, सबसे हुआ निबाह।
ये रस्ता जिसने दिया, वो खुद है गुमराह।।

ऐसी भेंट उसके लिए, मत ले जा नादान।
उसका भी अपमान है, तेरा भी अपमान।।

ज़ाहिर है वो आदमी, होगा सेहतमंद।
तौहफे में जो गुल मिले, बना लिया गुलकंद।।

उसके आगे झुंड है, उसके पीछे झुंड।
लिये मदारी फिर रहा, झोली में नरमुंड।।

इधर आग ही आग है, उधर आग ही आग।'
सारे मौसम गा रहे, अब तो दीपक राग।।

कब बांटे छांटे गये, पीपल, बरगद नीम।
धरती के टूकड़े हुए, लोग हुए तकसीम।।

ना रोगन में जान है, ना बाती में रूह।
उजियारा कैसे करे, घर में दीप समूह।।

उस दिन से उलझन बढ़ी, नींदें हुई हराम।
जिस दिन से आया नहीं, खत कोई गुमनाम।।

तुमसे ये किसने कहा, गीत नये मत गाव।
इस बर्फ़ीली रात में, रौशन करो अलाव।।

रचनाओं से और की, चुनता है तासीर।
अपने तरकश से चला, अपना कोई तीर।।

जब मैंने देखा उठे, जागी नई उमंग।
इन्द्रधनुष का भा गया, मुझे सातवां रंग।।

मारा तो वो जायगा, जो होगा कमज़ोर।
यार अली बाबा बनो, या बन जाओ चोर।।

मुँह माँगी कीमत मिली, मिली न होती बोल।
अब तो सच्चे बाँट रख, अब तो कम मत तोल।।

उसने तोहफे में दिया, लिखकर अपना नाम।
देखो किसका आईना, आया किसके काम।।

गोरी अपनी पीर को, मन में रखे छुपाय।
नैनों के जल से कभी, काजल ना बहजाय।।

आँधी उसका नाम है, तेज चले या मंद।
मैंने तो सबकर लिए, द्वार दरीचे बंद।।

माली डूबा सोच में, किसका है ये खेल।
उसके होते पेड़ पर, कैसे चढ़ गई बेल।।

मैं बढ़ता तो रोकता, कैसे कोई वीर।
कुछ उसूल पहना गये, पैरों में ज़ंजीर।।

तिनका-तिनका बीन के, पँछी स्वयं बनाय।
नीड किराये पर मिले, ये कैसे हो पाय।।

जब तक मुँह देखी कही, पड़े गले में हार।
सच बोले तो हो गई, तीरों की बौछार।।

वैसा ही वो आदमी, जैसे जिसके यार।
फूलों को छूकर हवा, हो गई खुश्बूदार।।

बिना कहे ही कह गया, गुलदस्ते का फूल।
पँखुरियाँ झर जायेंगी, रह जायेंगे शूल।।

कुछ की पूरी हो गई, अनायास ही आस।
कुछ कोल्हू में पिर गये, ये भी है इतिहास।।

जाने किस दिन जाग के, हमला करे जमीर।
बेख़बरी में आ लगे, अँधियारे का तीर।।

जिन नगरों में चल रहे, बाहर के आदेश।
उन नगरों को छोड के, जन्नत है ये देश।।

मत छेड़ो इस बात को, दिल दुखता है यार।
बाज़ारों में आ गये, बिकने को फ़नकार।।

गली मोहल्ले माँगता, फिरता भीक फ़क़ीर।
अपने पुरखों से मिली, उसको ये जागीर।।

लम्बाई तो कुछ नहीं, लम्बाई मत नाप।
काटे का मंतर नहीं, ऐसा है ये साँप।।

दास मलूका का कथन, इस युग में बेकार।
अजगर की खालें खिंची, पंछी हुए शिकार।।

बगिया में भी मिल गये, मसले कुचले फूल।
कोई गुलदस्ता नहीं, चढ़ी न जिस पर धूल।।

सीधा कोई भी नहीं, राजा हो या रंक।
धरती पर फैला रहे, दोनों ही आतंक।।

नदिया जल ने दी सदा, गया न उसके पास।
कोरी मटकी देख के, मेरी उमगी प्यास।।

कष्ट स्वयं को दीजिये, औरों को आराम।
ये कायरता का नहीं, है पौरूष का काम।।

एक डगर पर चल पड़े, तेरे मेरे पांव।
फिर भी मेरी छांव पर, पड़ी न तेरी छांव।।

बड़े पते की बात है, तुमको दूं बतलाय।
इतना ऊँचा मत उड़ो, बाज़ झपट ले जाय।।

ये कैसे दिन आ गये, क्या होगा भगवान।
जान हथेली पर लिये, फिरता है इंसान।।

हर सुगंध से हो गई, जब मेरी पहचान।
टुकडे-टुकडे कर दिया, कमरे का गुलदान।।

हाथ अखाडे में उठा, उसका ही हर बार।
कुश्ती मैंने मारली, जीता मेरा यार।।

अब क्या उसके पास है, रंग रहा न रूप।
हम अपने घर से चले, तन पर ओढ़े धूप।।

कानों से एहसास के, कोई सुने पुकार।
इक्तारे सा बज रहा, दामन का हर तार।।

लिख डाली सारी व्यथा, खाक न समझे लोग।
करना है अच्छा करो, काग़ज़ का उपयोग।।

सबने दोहों में रची, अपनी अपनी पीर।
तुलसी, खुसरो, जायसी, या हो दास कबीर।।

